**ओ३म्**

**‘गृहस्थ आश्रम पर महर्षि दयानन्द के कुछ ग्राह्य विचार’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 महर्षि दयानन्द सिद्ध योगी और बाल ब्रह्मचारी थे। उन्होंने समस्त वेदों एवं वैदिक साहित्य का तलस्पर्शी अध्ययन किया था और अपनी ऊहापोह व तर्कणा शक्ति से उसका मन्थन कर सत्य व असत्य विचारों व मान्यताओं को पृथक-पृथक किया था। देश हित में उन्होंने वेदों का उद्धार व समाज सुधार के अनेकानेक कार्य किये जिससे देश व समाज को अभूतपूर्व लाभ हुआ और वह अनेक भावी कठिन व जटिल विपदाओं से बच गया। उनके बाद उनके अनुयायियों से इतर लोगों में उन जैसा ज्ञान, सामर्थ्य, सोच, योजना, त्याग व समर्पण न होने के कारण उनका वह स्वप्न आज भी अधूरा है। आज देश के जो हालात हैं, वह भारत के इतिहास का एक कठिनतम दौर है और भविष्य क्या होगा? यह अनुमान लगाना कठिन है जिसके प्रति अनेक आशंकायें हैं। आज इतना ही कहना समीचीन है कि सभी राष्ट्रवादियों को एक जुट होना होगा और छद्म राष्ट्रवादियों को बेनकाब कर उन्हें वैचारिक आधार पर परास्त करना होगा।

वैदिक आश्रम व्यवस्था में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम को लेकर अनेकानेक भ्रान्तियां प्रचलित रही हैं जिनका निराकरण नहीं हो पा रहा था। महर्षि दयानन्द जी ने अपने समय में अपने अपूर्व ज्ञान से सभी भ्रान्तियों का निराकारण किया। आश्रम व्यवस्था में गृहस्थाश्रम पर आपने अपने बहुमूल्य विचार प्रस्तुत किये हैं जिन पर इस लेख में दृष्टि डाल रहे हैं। महर्षि दयानन्द प्रश्न करते हैं कि गृहस्थाश्रम अन्य तीन ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रमों में सब से छोटा है वा बड़ा है? इसका उत्तर देते हुए वह कहते हैं कि **अपने-अपने कर्तव्यकर्मों में सब आश्रम बड़े् हैं।** परन्तु--

**यथा नदीनदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।**

**तथैवाश्रमिणः सर्वे गृहस्थे यान्ति संस्थितिम्।।1।।**

**यथा वायुं समाश्रित्य वत्र्तन्ते सर्वजन्तवः।**

**तथा गृहस्थमाश्रित्य वत्र्तन्ते सर्वं आश्रमाः।।2।।**

उपर्युक्त दोनों श्लोक मनुस्मृति के हैं। महर्षि दयानन्द ने इस प्रसंग में अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास में अन्य दो श्लोक भी दिये हैं। इन चारों श्लोकों का अर्थ करते हुए वह कहते हैं कि जैसे नदी और बड़े-बड़े नद तब तक भ्रमण करते व बहते ही रहते हैं जब तक समुद्र को प्राप्त नहीं होते, **वैसे गृहस्थ ही के आश्रय से सब आश्रम स्थिर रहते है।।1।। बिना इस आश्रम के किसी आश्रम का कोई व्यवहार सिद्ध नहीं होता।।2।। जिस से ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी तीन आश्रमों को गृहस्थाश्रमी दान और अन्नादि देके प्रतिदिन ही धारण करते हैं इससे गृहस्थ ज्येष्ठाश्रम है, अर्थात् सब व्यवहारों में धुरन्धर कहलाता है।** इसलिये जो मनुष्य वा स्त्री-पुरुष अक्षय मोक्ष और संसार के सुख की इच्छा करता हो वह प्रयत्न से गृहाश्रम को धारण करे। यह गृहाश्रम दुर्बलेन्द्रिय अर्थात् भीरु और निर्बल पुरुषों से धारण करने से अयोग्य है। इसको (ब्रह्मचारीगण) अच्छे प्रकार से वरण कर धारण करें। यह मनुजी के विचार व आदेश हैं। मनु जी के इन विचारों को प्रस्तुत कर महर्षि दयानन्द टिप्पणी करते हुए कहते हैं कि इस कारण से **जितना कुछ व्यवहार संसार में है उस का आधार गृहस्थाश्रम है। जो यह गृहाश्रम न होता तो सन्तानोत्पत्ति के न होने से ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम कहां से हो सकते? जो कोई गृहाश्रम की निन्दा करता है वही निन्दनीय है और जो प्रशंसा करता है वही प्रशंसनीय है। परन्तु गृहाश्रम में तभी सुख होता है जब स्त्री पुरुष दोनों परस्पर प्रसन्न, विद्वान, पुरुषार्थी और सब प्रकार के व्यवहारों के ज्ञाता हों। इसलिये गृहाश्रम के सुख का मुख्य कारण ब्रह्मचर्य और स्वयंवर (वर-वधु द्वारा विवेकपूर्वक स्वयं निश्चित) विवाह है।**

वैवाहिक जीवन में संयम रखने और ब्रह्मचर्य का पालन करने की ओर भी महर्षि दयानन्द गृहस्थियों का ध्यान दिलाते हैं। वह कहते हैं कि गृहस्थ के स्त्री व पुरुषों को यह ध्यान रखना चाहिये कि उनके शरीर में सन्तान उत्पन्न करने के ईश्वर ने जो पदार्थ रज व वीर्य बनाये हैं उनको वह अमूल्य समझे। जो कोई इस अमूल्य पदार्थ को परस्त्री, वेश्या वा दुष्ट पुरुषों के संग में खोते हैं वे महामूर्ख होते हैं। किसान वा माली मूर्ख होकर भी अपने खेत वा वाटिका के विना अन्यत्र बीज नहीं बोते। जब साधारण बीज और मूर्ख किसान वा माली का ऐसा वर्तमान है तो जो सर्वोत्तम मनुष्य-शरीर रूप के बीज को कुक्षेत्र में खोता है वह महामूर्ख कहाता है, क्योंकि उस का उत्तम फल उस मानव बीज की महत्ता न समझने वाले को नहीं मिलता। **‘आत्मा वै जायते पुत्रः’** यह ब्राह्मण ग्रन्थ और निम्न श्लोक सामवेद के ब्राह्मण ग्रन्थ का है।

**अंगादंगात् सम्भवसि हृदयादधि जायसे।**

**आत्मासि पुत्र मा मृथाः स जीव शरदः शतम्।।**

इस श्लोक में पिता कहता है कि हे पुत्र ! तू अंग -अंग से उत्पन्न हुए वीर्य से और हृदय से उत्पन्न होता है। इसलिये तू मेरा आत्मा है, मुझ से पूर्व मत मरना किन्तु सौ वर्ष तक जीवत रहना। जिस पौरूष शक्ति वीर्य से ऐसे-ऐसे महात्मा और महाशयों के शरीर उत्पन्न होते हैं उस को वैश्यादि दुष्ट क्षेत्र में बोना वा दुष्टबीज अच्छे क्षेत्र में बुवाना महापाप का काम है। महर्षि दयानन्द ने इन पंक्तियों में जो बात कही है वह चिकित्साशास्त्र और वैदिक ज्ञान का निष्कर्ष है और सदाचार का आधार है।

एक समय था जब यूरोप में लोग बिना विवाह किये स्वेच्छाचार करते थे। तब वहां के एक सदाचारी पुरूष वैलेण्टाइन ने आन्दोलन किया और लोगों को विवाह के लिए सहमत किया था। वैलेण्टाइन अल्पायु में ही मृत्यु का ग्रास बन गये थे अन्यथा वह इस दिशा और बहुत कार्य करते। उनके नाम पर ही वैलेण्टाइन दिवस मनाया जाता है परन्तु उनकी भावनाओं को भुला दिया गया है। भारत में विवाह का प्रचलन सृष्टि के आदि काल में ही वेदों की शिक्षाओं के आधार पर अस्तित्व में आ गया था। अनेक दुर्मति लोग भी विवाह के विषय में समय-समय पर प्रश्न उठाते रहते हैं। महर्षि दयानन्द ने भी इन प्रश्नों को उठाया और उनके उत्तर दिये हैं। **उन्होंने प्रश्न किया है कि विवाह क्यों करना चाहिये?** क्योंकि इस से स्त्री पुरुष को बन्धन में पड़के बहुत संकोच करना और दुःख भोगना पड़ता है इसलिये जिस के साथ जिस की प्रीति हो तब तक वह मिले रहें, जब प्रीति छूट जाय तो छोड़ देवें? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महर्षि दयानन्द कहते हैं कि यह पशु पक्षियों का व्यवहार है, मनुष्यों का नहीं। **जो मनुष्यों में विवाह का नियम न रहे तो गृहाश्रम के अच्छे-अच्छे व्यवहार सब नष्ट भ्रष्ट हो जायें। कोई किसी की सेवा भी न करे। और महाव्याभिचार बढ़ कर सब रोगी निर्बल और अल्पायु होकर शीघ्र-शीघ्र मर जायें। कोई किसी से भय व लज्जा न करे। वृद्धाश्रम में कोई किसी की सेवा भी नहीं करे और महाव्याभिचार बढ़ कर सब रोगी निर्बल और अल्पायु होकर कुलों के कुल नष्ट हो जायें। कोई किसी के पदार्थों का स्वामी वा दायभागी भी न हो सके और न किसी का किसी पदार्थ पर दीर्घकालपर्यन्त स्वत्व वा अधिकार रहे, इत्यादि दोषों के निवारणार्थ विवाह ही होना सर्वथा योग्य है।** महर्षि दयानन्द ने विवाह के पक्ष में इन तर्कों को देकर विवाह विषयक कुतर्क करने वालों के मुंह पर ताला लागा दिया है। आज के समाज में लिवइनरिलेशन व होमोसेक्सुअलिटी के अमर्यादित, ईश्वर व सृष्टि के नियमों के विरुद्ध, व्यवहार व मांगों के परिप्रेक्ष्य में भी महर्षि दयानन्द का विवाह के समर्थन में दिया गया उत्तर विचारणीय एवं महत्वपूर्ण हैं।

महर्षि दयानन्द जी ने गृहस्थाश्रम के विषय में सत्यार्थप्रकाश के चतुर्थ समुल्लास सहित संस्कारविधि व अपने वेदभाष्य में बहुत ही महत्वूपर्ण विचारों व वैदिक सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया है जो आज भी प्रासंगिक एवं उपादेय हैं। अनेक वैदिक विद्वानों ने भी इस विषय में कुछ लाभकारी ग्रन्थों की रचना की है जिनसे लाभ उठाया जा सकता है। **आधुनिक युग में महर्षि दयानन्द स्त्री जाति के सर्वाधिक हितैषी महापुरूष हुए हैं।** विवाह की व्यवस्था का आरम्भ वेदों से संसार में हुआ है जिसको इस पृथिवी के सभी भूभागों के लोगों द्वारा अपनाया गया। कालान्तर में विवाह विषयक कुछ नियमों व व्यवहारों को लोग भूल बैठे थे जिससे अनेक समस्यायें उत्पन्न हुईं। आज महर्षि दयानन्द ने विवाह विषयक सभी समस्याओं एवं गृहस्वामी व गृहसम्राज्ञी अर्थात् पति व धर्मपत्नी के विषय में विवाह की अर्हतायें, गुणकर्मस्वभाव की समानता, आयुभेद, गृहस्थ आश्रम में पति व पत्नी के कर्तव्य वा दायित्व आदि विषयों पर पड़े अज्ञानता व रूढि़वाद के आवरण को हटा दिया है। महर्षि दयानन्द के विचार सभी मतों व धर्मों के लोगों के लिए उपादेय व प्रगतिसूचक हैं। सभी को इनका अध्ययन कर इनसे लाभ उठाना चाहिये।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**